विषय	हिंदी
प्रश्नपत्र सं. एवं शीर्षक	**P5: भाषाविज्ञान**
इकाई सं. एवं शीर्षक	**M29: भाषाशिक्षण**
इकाई टैग	**HND_P5_M29**

निर्माता समूह	
प्रमुख अन्वेषक	**प्रो. गिरीश्वर मिश्र** कुलपति, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001 ईमेल : misragirishwar@gmail.com
प्रश्नपत्र समन्वयक	**डॉ. उमाशंकर उपाध्याय** पूर्व प्रोफेसर, भाषा विद्यापीठ महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001 ईमेल : usupadhyay@gmail.com
इकाई-लेखक	**प्रो. कृष्ण कुमार गोस्वामी** पूर्व प्रोफेसर, केंद्रीय हिंदी संस्थान, दिल्ली ईमेल : kkgoswami1942@gmail.com
इकाई समीक्षक	**डॉ. उमाशंकर उपाध्याय** पूर्व प्रोफेसर, भाषा विद्यापीठ महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001 ईमेल : usupadhyay@gmail.com
भाषा संपादक	**डॉ. उमाशंकर उपाध्याय** पूर्व प्रोफेसर, भाषा विद्यापीठ महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) 442001 ईमेल : usupadhyay@gmail.com

पाठ का प्रारूप

1. पाठ का उद्देश्य
2. प्रस्तावना
3. भाषाविज्ञान और भाषाशिक्षण
4. भाषाशिक्षण - प्रयोजनपरक संदर्भ
5. भाषाशिक्षण की प्रमुख विधियाँ
6. व्यतिरेकी विश्लेषण और त्रुटि विश्लेषण
7. भाषा परीक्षण और मूल्यांकन
8. निष्कर्ष

1. पाठ का उद्देश्य

इस पाठ के अध्ययन के उपरांत आप-

- भाषाशिक्षण के शैक्षिक स्वरूप को समझ सकेंगे;
- भाषाशिक्षण को भाषाविज्ञान के अनुप्रयोगिक संदर्भ में जान सकेंगे;
- भाषाशिक्षण के ऐतिहासिक संदर्भ से परिचित हो सकेंगे;
- मातृभाषा, द्वितीय भाषा और विदेशी भाषा में अंतर कर सकेंगे;
- भाषाशिक्षण की विधि-प्रविधियों को जान सकेंगे;
- भाषाशिक्षण के संदर्भ में व्यतिरेकी विश्लेषण तथा त्रुटि विश्लेषण से अवगत हो सकेंगे;
- भाषा-परीक्षण और भाषा-मूल्यांकन से परिचित हो सकेंगे।

2. प्रस्तावना

भाषाशिक्षण का संबंध एक ओर भाषा से रहता है तो दूसरी ओर मानवीय व्यवहार और मानव मन से। मानव भाषा की अपनी प्रकृति, अपनी विशिष्टताएँ, अपनी संरचना, अपने प्रकार्य, अपने विकल्पन, अपनी शैलियाँ और अपने रूप होते हैं जो भाषाशिक्षण की प्रक्रिया तथा कार्यान्वयन में अपनी भूमिका निभाते हैं। इसके साथ ही मानव के भाषा-प्रयोक्ता होने के कारण उसके व्यक्तित्व, उसके सामाजिक-सांस्कृतिक संदर्भ और जगत के प्रति उसकी दृष्टि भी भाषाशिक्षण में अपना प्रभाव डालते हैं। अत: भाषाशिक्षण में इस बात पर ध्यान देना आवश्यक हो जाता है कि भाषा को सामाजिक वस्तु के रूप में माना जाए ताकि भाषा संप्रेषण व्यवस्था का सशक्त माध्यम बनने के साथ-साथ मानसिक जीवन की संकल्पनात्मक शक्ति भी बन जाए। इस प्रकार यदि शिक्षक विषयवस्तु को उचित भाषाप्रयोग में संयोजित कर शिक्षार्थी तक पहुंचा नहीं पाता तो यह माना जाएगा कि वह अपने लक्ष्य में खरा नहीं उतरा और यदि शिक्षार्थी संप्रेष्य कथ्य को भाषा के सहारे अपनी संकल्पनात्मक भूमि में उतार कर उसे आत्मसात नहीं कर लेता तो उसे भाषा का योग्य प्रयोक्ता नहीं माना जा सकता।

3. भाषाविज्ञान और भाषाशिक्षण

भाषाविज्ञान आज अन्य मानवविज्ञानों की अपेक्षा अधिक विकसित और व्यापक विषय के रूप में उभरा है। इसके एक ओर भाषाविज्ञान की सैद्धांतिक पृष्ठभूमि है जो किसी भी भाषा की संरचना के विश्लेषण के लिए वैज्ञानिक दृष्टि प्रदान करती है तो दूसरी ओर यह अपने प्रकार्य और प्रयोजन में एक विविधतापूर्ण शास्त्र की भूमिका निभाता है। इसके अतिरिक्त इसका अन्य शास्त्रों से भी अटूट संबंध है। इसी लिए भाषाविज्ञान को आज अनेक संभावनाओं का पुंज माना जाता है क्योंकि यह मानविकी के विषयों में सर्वाधिक वैज्ञानिक है और वैज्ञानिक विषयों में सर्वाधिक मानव-केंद्रित विषय के रूप में स्थापित हुआ है। वस्तुत: यह वैज्ञानिक विश्लेषण प्रक्रिया के साथ-साथ अनुप्रयोग में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। भाषावैज्ञानिक सिद्धांतों के अनुप्रयोग के कारण ही विभिन्न कार्य-क्षेत्रों और विषयों में इसके अनुप्रयुक्त पक्ष को तीन संदर्भों में देखा जा सकता है:

1) ज्ञान-क्षेत्र का संदर्भ;
2) विद्या-विशेष का संदर्भ;
3) भाषा-शिक्षण का संदर्भ।

ज्ञान-क्षेत्र के संदर्भ में भाषाविज्ञान और उसके सिद्धांतों का अनुप्रयोग ज्ञान के अन्य क्षेत्रों को स्पष्ट करने के लिए किया जाता है। इस संदर्भ में यदि हम समाजशास्त्र और मनोविज्ञान को लें तो यह सर्वमान्य तथ्य है कि मनुष्य

सामाजिक प्राणी होने के साथ-साथ बातचीत करने वाला सर्जनात्मक प्राणी भी है। अतः भाषा का सीधा संबंध मानव मन और मानव जीवन के अनेक स्तरों से बना रहता है। यदि एक ओर वह मन की आंतरिक प्रकृति से जुड़ी हुई है तो दूसरी ओर समाज की संचार व्यवस्था से भी। जहाँ भाषावैज्ञानिक सिद्धांतों के निरूपण के लिए 'मानव मन' अथवा 'मानव समाज' से संबद्ध ज्ञान को जोड़ा जाता है, वहाँ भाषाविज्ञान का अनुप्रायोगिक पक्ष भाषावैज्ञानिक सिद्धांतों के माध्यम से हमारे सामाजिक तथा मानसिक व्यवहार को समझने-समझाने में सहायता भी करता है। इसी दृष्टि से कंप्यूटरीकृत भाषाविज्ञान में भी मानव-मशीन अंतरक्रिया के परिप्रेक्ष्य में कंप्यूटर प्रणाली से उठने वाली भाषायी समस्याओं के समाधान के लिए भाषिक सिद्धांतों और पद्धतियों को उपभोक्ता के रूप में काम में लाया जाता है। इसमें प्रकृत भाषा संसाधन के लिए भाषावैज्ञानिक सिद्धांत, प्रक्रिया और नियमों का अनुप्रयोग होता है। इस प्रकार समाज की संरचना तथा प्रकृति को समझने के लिए भाषावैज्ञानिक सिद्धांतों का अनुप्रयोग 'समाजभाषाविज्ञान' है; मानव भाषा के विभिन्न रूपों तथा बोधन की प्रक्रिया को समझने के लिए भाषावैज्ञानिक सिद्धांतों का अनुप्रयोग 'मनोभाषाविज्ञान' है और मानव की कंप्यूटरीकृत क्षमता के अंतर्गत भाषावैज्ञानिक नियमों का संसाधन 'कंप्यूटरीकृत भाषाविज्ञान' है। वास्तव में ये तीनों विधाएँ ज्ञानक्षेत्र के वे संधिस्थल हैं जो अनुप्रयुक्त होते हुए भी भाषावैज्ञानिक सिद्धांतों का अन्वेषण करते हैं और इसीलिए ये अनुप्रायोगिक होते हुए भी अपनी स्वतंत्र सत्ता बनाए हुए हैं।

विद्या-क्षेत्र के संदर्भ में अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान विशेष विधाओं से जुड़ता है, अतः इसमें भाषावैज्ञानिक सिद्धांतों का जो अनुप्रयोग किया जाता है, उसका लक्ष्य संक्रियात्मक होता है। संक्रियात्मक रूप में शैलीविज्ञान, अनुवादविज्ञान, कोशविज्ञान, वाक्-चिकित्सा विज्ञान आदि विषयों में भाषावैज्ञानिक सिद्धांतों का अनुप्रयोग अनिवार्यतः होता है, क्योंकि ये मुख्यतः भाषा से संबद्ध हैं। शैलीविज्ञान, भाषा की सर्जनात्मक प्रक्रिया और कलात्मक प्रयोगों का अध्ययन करता है, जिसमें भाषावैज्ञानिक सिद्धांतों का अनुप्रयोग होता है। कोश-निर्माण की प्रक्रिया में भाषावैज्ञानिक सिद्धांत महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। वाक्-चिकित्सा विज्ञान में भाषा संबंधी रोगों और विकारों के निदान में भाषावैज्ञानिक सिद्धांतों का अनुप्रयोग होता है। इन विधाओं को एक निश्चित सैद्धांतिक संदर्भ देने और उसके अध्ययन-विश्लेषण के लिए एक सुनिश्चित वैज्ञानिक तकनीक विकसित की जाती है जिसमें भाषावैज्ञानिक सिद्धांत एवं प्रणाली के अनुप्रयोग का सर्वाधिक योगदान रहता है।

भाषाशिक्षण के संदर्भ में यह कहना असमीचीन न होगा कि भाषावैज्ञानिक सिद्धांतों का अनुप्रयोग भाषाशिक्षण में सर्वाधिक होता है। यह इसका संकुचित संदर्भ है। भाषाविज्ञान की इस देन ने इसमें अपना एक विशिष्ट स्थान बना लिया है और अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान की अनिवार्यता सिद्ध कर दी है। भाषाशिक्षण में भाषिक विश्लेषण करने और अधिगम प्रक्रिया को समझने में भाषाविज्ञान का अनुप्रयोग सहायक सिद्ध होता है। आज मातृभाषाशिक्षण और अन्यभाषा शिक्षण के साथ-साथ शैक्षिक व्याकरण, शिक्षण सामग्री, तकनीक आदि सभी में भाषावैज्ञानिक सिद्धांतों के अनुप्रयोग की अनिवार्यता परिलक्षित होती है। यही कारण है कि भाषाशिक्षण भाषाविज्ञान की एक स्वतंत्र अनुप्रयोगिक विधा कहलाती है। कुछ विद्वान तो भाषाशिक्षण और अनुप्रयुक्त भाषाविज्ञान को सहधर्मी और पर्यायवाची संकल्पनाएँ बताते हैं।

यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि भाषाशिक्षण में भाषाशिक्षक भाषाविज्ञान नहीं पढ़ाता। वह 'भाषा' पढ़ाता है जो भाषाविज्ञान की अध्ययन-वस्तु है। भाषाविज्ञान भाषा-शिक्षण के लिए भाषा का अच्छे से अच्छा विवरण उपलब्ध करता है तथा अन्यभाषा की तुलना मातृभाषा से करने की दृष्टि प्रदान करता है। यह वैज्ञानिक दृष्टि भी अनुप्रयोग से जुड़ी होती है जिसे व्यतिरेकी भाषाविज्ञान कहते हैं।

4. भाषाशिक्षण : प्रयोजनपरक संदर्भ

भाषाशिक्षण का भाषा से सीधा संबंध है। इसमें सीखने-सिखाने वाली वस्तु भाषा ही है जो साध्य तो होती ही है साधन भी होती है। साध्य के रूप में यह अपने-आप में विषय होती है जिसमें इसका व्याकरण और साहित्य पढ़ाया जाता है। साधन के रूप में यह अन्य विषयों के अध्ययन-अध्यापन के लिए माध्यम की भूमिका निभाती है। इसलिए भाषाशिक्षण की सिद्धि निर्धारित प्रयोजन की सिद्धि से ही होती है, क्योंकि यह शिक्षार्थी या प्रयोक्ता-सापेक्ष होती है। वास्तव में भाषाशिक्षण में अध्येय भाषा की प्रकृति और प्रणाली भाषा अध्येता की आवश्यकता, प्रयोजन, अभिप्रेरण (Motivation) और उसकी मनोवृत्ति के कारण भिन्न हो जाती है। इसी लिए भाषा अधिगम (Language Learning) का महत्व बढ़ा है। इसी परिप्रेक्ष्य में भाषाशिक्षण में जो विभाजन हुआ है वह प्रमुख रूप से मातृभाषाशिक्षण और अन्यभाषाशिक्षण के रूप में हुआ है।

मातृभाषा - मातृभाषा एक सामाजिक यथार्थ है जो व्यक्ति को अपने भाषायी समाज के व्यापक सामाजिक संदर्भों से जोड़ती है और उसकी सामाजिक अस्मिता का निर्धारण करती है। इसी के आधार पर व्यक्ति अपने समाज और संस्कृति के साथ जुड़ा रहता है। वास्तव में मातृभाषा पालने की भाषा होती है जिससे व्यक्ति का समाजीकरण होता है। हिंदी के संदर्भ में मातृभाषा के रूप में हिंदी भाषा मूल रूप से बोली-भाषी समूहों से विकसित हुई है। खड़ीबोली, ब्रज, अवधी, भोजपुरी, मैथिली, मारवाड़ी, छतीसगढ़ी आदि बोलियों के प्रयोक्ता अपने बोली-क्षेत्र के बाहर के बृहत्तर समाज से जुडने तथा अपनी सामाजिक अस्मिता स्थापित करने के लिए हिंदी को मातृभाषा के रूप में स्वीकार करते हैं और सीखते हैं जबकि इसकी बोलियाँ वास्तविक मातृभाषा ही हैं। मातृभाषा से प्रयोक्ता के बौद्धिक विकास के साथ-साथ उसकी संवेदनाओं और अनुभूतियों की अभिव्यक्ति होती है। इसलिए उसकी बौद्धिक चेतना में वृद्धि करने के लिए मातृभाषा के पढ़ने और लिखने के कौशल सिखाए जाते हैं और वह साक्षर हो कर अपने रोज़मर्रा के कार्य सुचारू रूप से करने में सक्षम होता है। शिक्षा के संदर्भ में मातृभाषा स्वयं साध्य बनती है और अन्य विषयों के शिक्षण के लिए साधन अर्थात माध्यम के रूप में सिखाई जाती है।

अन्यभाषा - मातृभाषा से इतर किसी दूसरी भाषा को अन्यभाषा के अंतर्गत रखा गया है। अन्यभाषा को दो वर्गों में विभाजित किया गया है - द्वितीय भाषा और विदेशी भाषा। वास्तव में एक देश में अपनी भौगोलिक सीमा के अंतर्गत मातृभाषा से अलग प्रयुक्त भाषा द्वितीय भाषा मानी जाती है जो अधिकतर सामाजिक दृष्टि से प्रकार्यात्मक अथवा व्यावहारिक कारणों से सीखी जाती है। बहुभाषी देश में यह प्राय: समसांस्कृतिक और समसंरचनात्मक भाषाएँ होती है और अपने देश के नागरिक के रूप में वक्ता इसके प्रत्यक्ष मूल्यों से जुड़ा रहता है। भौगोलिक सीमा से बाहर भाषा को विदेशी भाषा कहते है जो प्राय: विषम सांस्कृतिक और विषम संरचनात्मक होती है। इसी कारण द्वितीय भाषा और विदेशी भाषा में अंतर रखा गया। विदेशी भाषा के प्रति प्रशिक्षार्थी का रुख अपेक्षाकृत निष्क्रिय और संग्राहक होता है जबकि द्वितीय भाषा में वह प्रायः सक्रिय और सर्जनात्मक होता है। द्वितीय भाषा एक ही देश की संस्कृति एवं परंपरा के संदर्भ में परिभाषित होती है जबकि विदेशी भाषा किसी अन्य देश की संस्कृति एवं परंपरा से जुड़ी होती है। विदेशी भाषा का शिक्षण अन्य देश की संस्कृति को जानने अथवा ग्रहण करने के प्रयोजन से होता है जबकि द्वितीय भाषा का शिक्षण अपने देश की संस्कृति को अभिव्यक्त करने के विकल्प के प्रयोजन से होता है। भारतीय संदर्भ में यदि हिंदी किसी की मातृभाषा है तो तमिल, तेलुगू, मराठी, गुजराती, बंगला, कश्मीरी, मणिपुरी आदि उसके लिए द्वितीय भाषा होंगी, क्योंकि ये समसांस्कृतिक और समसंरचनात्मक भाषाएँ हैं। यदि किसी व्यक्ति की मातृभाषा तमिल, तेलुगू, बंगला आदि में से कोई भी हो तो उसके लिए हिंदी द्वितीय भाषा होगी। इसी प्रकार

भारत में फ्रांसीसी, जर्मन, रूसी, जापानी, चीनी, अरबी आदि विदेशी भाषाएँ हैं। ये विषम सांस्कृतिक भाषाएँ है जिनका प्रयोग भारत में सामाजिक, सांस्कृतिक तथा सर्जनात्मक क्षमता बढ़ाने के लिए नहीं होता। साथ ही इनका मूल भी भारत में नहीं है। इन भाषाभाषियों के देश में हिंदी विदेशी भाषा है।।

शिक्षण की स्थितियाँ

अन्यभाषाशिक्षण में बोधन (श्रवण), पाठन, लेखन और भाषण चार कौशलों के शिक्षण की प्रक्रिया चलती है जबकि मातृभाषाशिक्षण अथवा प्रथम भाषाशिक्षण) में पाठन और लेखन दो कौशलों का शिक्षण होता है। इस आधार पर भी मातृभाषाशिक्षण, द्वितीय भाषाशिक्षण और विदेशी भाषाशिक्षण में भिन्नता मिलती है। इन तीनों के परिप्रेक्ष्य में इन कौशलों के अध्ययन-अध्यापन के लिए अलग-अलग विधियाँ और प्रविधियाँ भी हैं। इसलिए भाषाशिक्षण कार्यक्रम के संदर्भ में भाषिक लक्ष्यों को और विशेष भाषा-वर्ग के लिए शिक्षण की आवश्यकताओं को ध्यान में रखना होगा। निम्नलिखित सारणी से शिक्षण स्थिति का विवेचन किया जा सकता है:-

शिक्षण संदर्भ	मातृभाषा (प्रथम भाषा)	द्वितीय भाषा	विदेशी भाषा
पूर्व ज्ञान	(1) भाषिक क्षमता (2) संप्रत्यय निर्माण (3) प्रारंभिक स्तर पर सांस्कृतिक विशिष्टताएँ	(1) कुछ वर्गों में कुछ सीमा तक संग्रहण क्षमता (2) प्रगत संप्रत्यय निर्माण (3) क्षेत्रीय शब्दावली (यदि कोई है) (4) एक समान सांस्कृतिक विशिष्टताएँ (5) लेखनपद्धति और समान वर्ग	अंतर्निहित अधिगम प्रक्रिया और कुछ मामलों में संप्रत्ययीकरण की क्षमता
सिखाए जाने वाले कौशल	(1) लेखनपद्धति (2) संरचनाओं का विस्तार (3) संस्कृति- संक्रमणीकरण तथा प्रयोजनपरक शब्दावली	(1) संरचना (2) लेखनपद्धति (3) सांस्कृतिक स्थिति और शब्दावली का संवर्धन (4) ध्वनि-प्रक्रिया, व्याकरणिक संरचना, शब्दावली आदि के व्यतिरेकी बिंदु (5) हाव-भाव और भावभंगिमाओं से अभिव्यक्ति आदि (6) मातृभाषा के प्रभाव से और अन्य किसी दोषपूर्ण अधिगम प्रक्रिया से त्रुटियाँ (यदि कोई हों)	(1) संरचना (2) लेखनपद्धति (3) सांस्कृतिक स्थितियाँ (4) शब्दावली और प्रयोग (5) उन क्षेत्रों में मातृभाषा के कारण त्रुटियाँ जहाँ भाषाओं के बीच भाषा व्यवस्था में कोई अंतर हो।

इस प्रकार मातृभाषा, प्रथम भाषा, द्वितीय भाषा और विदेशी भाषा की संकल्पना को समझे बिना किसी भी भाषा के शिक्षण की प्रक्रिया और प्रणाली को स्पष्ट करना संभव नहीं है।

5. भाषाशिक्षण की प्रमुख विधियाँ

शिक्षा के क्षेत्र में भाषाशिक्षण अपने सिद्धांत, प्रणाली और तकनीक का निर्वहन तभी कर पता है जब उसमें भाषा अध्ययन और भाषा अधिगम की प्रक्रिया एक-साथ जुड़ी होती है। इसी संदर्भ में भाषाशिक्षण की अनेक विधियाँ

विकसित हुईं। कुछ विद्वान इस हद तक गए कि भाषाशिक्षण की विधियों की संख्या 54 तक पहुँच गए। भाषाशिक्षण के सुविख्यात विद्वान डब्ल्यू एफ मैके ने पंद्रह विधियाँ बताई हैं:

1. प्रत्यक्ष विधि (Direct Method)
2. व्याकरण विधि (Grammar Method)
3. अनुवाद विधि (Translation Method)
4. व्याकरण-अनुवाद विधि (Grammar-Translation Method)
5. सम्मिश्रण विधि (Eclectic Method)
6. मनोवैज्ञानिक विधि (Psychological Method)
7. ध्वन्यात्मक विधि (Phonetic Method)
8. वाचन विधि (Reading Method)
9. इकाई विधि (Unit Method)
10. भाषा नियंत्रण विधि (Language Control Method)
11. अनुकरणात्मक विधि (Mimicry Memorization Method)
12. द्विभाषीय विधि (Dual Language Method)
13. अभ्यास सिद्धांत विधि (Practice Theory Method)
14. सजातीय विधि (Cognate Method)
15. नैसर्गिक विधि (Natural Method)

इन पंद्रह विधियों में अधिकतर विधियाँ एकांगी हैं और वे एक या दो भाषा-कौशलों के विकास में कारगर सिद्ध हो सकती हैं। यदि कक्षा में व्यवहृत होने वाली प्रक्रिया पर ध्यान दिया जाए तो यह भी पता चलता है कि अधिकतर विधियाँ एक-दूसरे में समाविष्ट हो सकती हैं। इसके अतिरिक्त तुलनात्मक विधि, समग्रतावादी विधि, बोधात्मक विधि, समुदायपरक विधि, सांकेतिक विधि, परिवीक्षण विधि, संप्रेषणपरक विधि आदि अनेक विधियों का विकास हुआ है। इस आधार पर इन सभी विधियों में से पाँच विधियों को प्रमुख विधियों के रूप में स्वीकार कर सकते हैं जिनमें अन्य विधियाँ अंतर्निहित हो जाती हैं। ये विधियाँ इस प्रकार हैं:

1. व्याकरण विधि
2. व्याकरण-अनुवाद विधि
3. प्रत्यक्ष विधि
4. सम्मिश्रण विधि
5. संप्रेषणपरक विधि

व्याकरण विधि: इस विधि के अंतर्गत अन्यभाषा के नियमों को कुछ शब्दों के साथ सिखाया और याद कराया जाता है। इसके बाद शब्द-संयोजन और व्याकरणिक नियमों के आधार पर अभ्यास कराए जाते हैं। इसमें व्याकरणिक नियमों की जानकारी पर तो अधिक ध्यान दिया जाता है लेकिन उनके वास्तविक भाषा-प्रयोग पर कम बल दिया जाता है। इस विधि की काफी आलोचना हुई क्योंकि यह भाषण कौशल और लेखन कौशल के विकास में उपयोगी सिद्ध नहीं हो पाई।

व्याकरण-अनुवाद विधि: यह विधि उन्नीसवीं शताब्दी के अंत तक परंपरागत और मान्य विधि के रूप में प्रचलित रही। इसमें व्याकरण और अनुवाद दो विधियाँ परस्पर संयोजित हैं। व्याकरण के स्तर पर यह विधि एक ओर लक्ष्यभाषा अथवा अन्यभाषा के रूपपरक विवरण पर आधारित है और दूसरी ओर मातृभाषा के साथ लक्ष्यभाषा के बीच अनुवादप्रक्रिया पर भी ध्यान देना पड़ता है। इसमें अध्यापक शिक्षार्थियों को शब्द-भेद, धातुरूप, कारक, काल-रचना आदि नियमों को याद करने का निर्देश देता है और साथ ही भाषा का व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करने के लिए द्विभाषी शब्दकोशों की सहायता से अनुवाद करने का भी निर्देश देता है। वस्तुत: इस विधि में मातृभाषा के परिप्रेक्ष्य में अन्य भाषा सिखाई तो जाती है किंतु अन्यभाषा के शिक्षण पर कम बल पड़ता है। इस विधि से शिक्षार्थी को भाषासंबंधी ज्ञान और सैद्धांतिक पक्ष तो मिल जाते हैं लेकिन उनकी भाषादक्षता मात्र पाठन और लेखन तक सीमित रह जाती है। संप्रेषणीयता का अभाव रहता है, भाषा के जीवंत पक्ष अधूरे रह जाते हैं और शिक्षार्थी की अभिरुचि एवं अभिप्रेरणा की कमी रहती है। इस लिए इस विधि के अव्यावहारिक होने के कारण इसे मान्यता नहीं मिल पाई।

प्रत्यक्ष विधि: व्याकरण-अनुवाद विधि की अनेक सीमाओं के कारण प्रत्यक्ष विधि का आविर्भाव हुआ। इसे मौखिक वार्तालाप विधि भी कहा जाता है। इस विधि में शिक्षार्थी की मातृभाषा की मध्यस्थता के बिना अन्य भाषा सिखाई जाती है। अन्य भाषा से सीधे शिक्षार्थी का संपर्क किया जाता है और वह मौखिक अभ्यास के द्वारा भाषा सीखता है। अन्य भाषा के वाक्यों को काफी समय तक बार-बार सुन कर अभ्यास करता है और फिर उन्हें आदत के रूप में ढाल लेता है। इस विधि के समर्थकों का मत है कि अन्य भाषा को भी उसी स्वाभाविक प्रक्रिया के अंतर्गत सिखाया जाना चाहिए जैसे बालक अपनी मातृभाषा सीखता है। इस विधि में न तो व्याकरण के नियम सीखने की आवश्यकता है और न ही अनुवाद प्रक्रिया में जाने की। इस विधि के अंतर्गत मनोवैज्ञानिक विधि, ध्वन्यात्मक विधि, भाषा नियंत्रण विधि, वाचन विधि और अभ्यास सिद्धांत विधि आते हैं। यह विधि भाषा अधिगम की स्वाभाविक प्रक्रिया पर आधारित है जिसमें भाषा से सीधा संपर्क होने के कारण भाषा के जीवंत और स्वाभाविक पक्षों की भी जानकारी मिल जाती है। वार्तालाप तकनीक के माध्यम से भाषा का मौखिक कौशल प्राप्त करना भाषाशिक्षण का मुख्य प्रकार्य है। इसी कारण प्रत्यक्ष विधि भाषाशिक्षण की प्रमुख विधि के रूप में विकसित हुई है।

सम्मिश्रण विधि: इस विधि के अंतर्गत भाषाशिक्षण की प्रक्रिया के व्यावहारिक पक्षों का सम्मिश्रण है। वस्तुत: व्याकरण-अनुवाद विधि भी व्याकरण विधि और अनुवाद विधि की एक मिश्र विधि है जिसकी शिक्षण प्रक्रिया व्याकरणिक नियमों, असंबद्ध शब्द, शब्द-भेद की जानकारी और फिर अनुवाद के सहारे चलती है। इसके अतिरिक्त समग्रतावादी विधि भी है जिसे प्रत्यक्ष विधि, व्याकरण विधि और अनुवाद विधि का सम्मिश्रण कह सकते हैं। इस सम्मिश्रण विधि में शिक्षक भाषाशिक्षण के विभिन्न उद्देश्यों के अनुरूप और शिक्षण प्रक्रिया के विभिन्न चरणों पर किसी भी विधि का चयन कर सकता है। कई विधियों का सम्मिश्रण भाषाशिक्षण की प्रक्रिया में कई बार काफी उपयोगी और सार्थक होता है।

संप्रेषणपरक विधि: प्रत्यक्ष विधि में भाषा के व्यावहारिक पक्ष बल दिया जाता है। इस विधि की प्रक्रिया को और सुदृढ़ बनाते हुए संप्रेषणपरक विधि का विकास हुआ। इस विधि के अंतर्गत भाषा अधिगम में शिक्षार्थी की संप्रेषण क्षमता तथा भाषा व्यवहार में अर्थ-सिद्धि पर अधिक बल दिया जाता है। डेल हाइम्स, हैलिडे, क्रिस्टोफर काईंडलीन, हेनरी विडोसन आदि विद्वानों का मत है कि भाषा सीखने का अभिप्राय मात्र व्याकरणिक क्षमता प्राप्त करना नहीं है अपितु उपयुक्त संदर्भों में उपयुक्त व्याकरणिक नियमों का प्रयोग भी है। भाषा-प्रयोग सीखने में ही भाषा की संरचना सीखना है। एक नियमबद्ध व्यवस्था के रूप में भाषा पूरी तरह नहीं सीखी जा सकती, इस लिए उसे एक सामाजिक

संप्रेषण की वस्तु के रूप में सीखना और सिखाना अपेक्षित है। इसमें सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भों के भी सीखने की आवश्यकता है। इस प्रकार संप्रेषणपरक विधि ने भाषाशिक्षण को एक ऐसा आधार दिया जिसमें भाषा के मौखिक रूप के साथ-साथ उसकी सामाजिक-सांस्कृतिक विशिष्टताओं पर भी ध्यान केंद्रित किया गया है। इस विधि से शिक्षार्थी में भाषा के प्रयोगजन्य दक्षता का विकास होता है जिससे भाषा सीखने का लक्ष्य पूरा होता है।

6. व्यतिरेकी विश्लेषण और त्रुटि विश्लेषण

संरचनात्मक भाषाविज्ञान और व्यवहारवादी मनोविज्ञान से यदि व्यतिरेकी विश्लेषण **(Contrastive Analysis)** के सिद्धांत और पद्धति का उद्भव और विकास हुआ है तो रूपांतरण भाषाविज्ञान और बुद्धिवादी मनोविज्ञान से त्रुटि विश्लेषण **(Error Analysis)** के सिद्धांत और प्रणाली का विकास हुआ है। व्यतिरेकी विश्लेषण अन्यभाषाशिक्षण के लिए काफी उपयोगी और महत्वपूर्ण माना गया है। इस पद्धति का विकास बीसवीं शताब्दी के चौथे दशक के प्रारंभ में अन्य भाषाशिक्षण के संदर्भ में हुआ था। व्यतिरेकी विश्लेषण के अनुसार द्विभाषियों के भाषा-व्यवहार में 'व्याघात' **(Interference)** की स्थिति आती है और अन्यभाषाशिक्षण के संदर्भ में तो यह स्वाभाविक है। कोई भी दो भाषाएँ पूर्णतया समान नहीं होतीं। अत: जब कोई मातृभाषी व्यक्ति अन्य भाषा सीखता है उस समय अपनी आदत के कारण वह मातृभाषा के नियमों को दूसरी भाषा या विदेशी भाषा के नियमों पर प्रक्षेपित करता है। मातृभाषा और अन्यभाषा के बीच संरचनात्मक समानताएँ और असमानताएँ होती हैं, किंतु उनमें असमानताएँ व्याघात का कारण होती हैं। इस व्याघात के कारण अन्यभाषा सीखते हुए जो कठिनाइयाँ आती हैं उन्हें दूर करने के लिए व्यतिरेकी विश्लेषण मातृभाषा और अन्यभाषा की व्यवस्था की असमानता का पता लगाता है और इसी आधार पर अन्यभाषा के व्याकरण तथा अध्ययन-सामग्री का निर्माण करने का प्रयास करता है। यह मुख्य रूप से शिक्षक का व्याकरण है जिसमें शिक्षक को भाषा सिखाते हुए कठिनाई की जिन संभावनाओं की जानकारी मिलती है, उन्हींके आधार पर वह शिक्षण-सामग्री अनुस्तरित रूप में प्रस्तुत करता है। इसमें शिक्षार्थी को ध्यान में नहीं रखा जाता। वस्तुत: व्यतिरेकी विश्लेषण में शिक्षण की संभावनाओं के आधार पर असमानता पर बल दिया जाता है जबकि भाषा की हर त्रुटि के मूल में व्याघात नहीं होता।

व्यतिरेकी विश्लेषण के सिद्धांत, प्रयोजन और प्रणाली की कई सीमाओं को ध्यान में रखते हुए त्रुटि विश्लेषण का विकास हुआ। त्रुटि विश्लेषण शिक्षक के स्थान पर शिक्षार्थी को केंद्र में रखता है और उसी संदर्भ में 'पढ़ाने की प्रक्रिया' को बहुत कुछ 'सीखने की प्रक्रिया' के अनुसार ढालना आवश्यक समझता है। सीखने की प्रक्रिया के अनुरूप व्याकरण सार्थक तथा सक्षम बन पता है। यही शैक्षिक व्याकरण कहलाता है। यह व्याकरण शिक्षार्थी का व्याकरण है जो मनोवैज्ञानिक स्तर पर यथार्थ भी होता है। वस्तुत: व्यक्ति अपनी मातृभाषा का प्रयोग दैनिक जीवन में जिस क्षमता, सार्थकता और विविधता के साथ करता है अन्यभाषा में नहीं कर पाता। कई बार वह भाषा का प्रयोग गलत संदर्भों में भी कर लेता है, जो शिक्षण प्रक्रिया में एक अलग भाषा बन जाती है। इस भाषा को अधिकतर विद्वान 'अंतर भाषा' कहते हैं। अंतर भाषा में नियमों की जो व्यवस्था होती है उसमें न तो मातृभाषा के नियम पूर्णतया होते हैं और न ही अन्य भाषा के। यह भाषा 'संक्रांतिपरक' (Transitional) होती है जो प्राय: अस्थिर और परिवर्तनशील होती है। भाषाशिक्षण में जो त्रुटियाँ होती हैं उनके मूल में 'अंतर भाषा' काम करती है। ये व्यवहार-संदर्भित त्रुटियाँ अर्थात दोष नहीं हैं और न ही अज्ञान- संदर्भित त्रुटियाँ हैं जो गलती या अशुद्धि कहलाती हैं। ये अंतर भाषा संदर्भित त्रुटियाँ हैं जिन्हें शिक्षार्थी वास्तविक रूप में करता है। इन्हीं त्रुटियों को ध्यान में रख कर शिक्षण-सामग्री के निर्माण की आवश्यकता होती है। इस प्रकार भाषाशिक्षण को प्रभावी, उपयोगी और उपादेय बनाने के लिए शिक्षार्थी को केंद्र में

रखना होगा। यह विश्लेषण भाषा अधिगम प्रक्रिया के संदर्भ में स्वाभाविक और यथार्थपरक होगा तथा शिक्षार्थी के व्यवहार में पाई जाने वाली त्रुटियों के निराकरण के लिए सुधारात्मक पाठ बनाने में सुविधापरक होगा।

7. भाषा परीक्षण और मूल्यांकन

भाषाशिक्षण में भाषा परीक्षण **(Language Testing)** और भाषा मूल्यांकन **(Language Evaluation)** की विशिष्ट भूमिका रहती है। भाषाशिक्षण के सैद्धांतिक और तकनीकी ज्ञान के साथ भाषा परीक्षण और मूल्यांकन को भी एक निश्चित दिशा और तकनीक प्राप्त हुई है। भाषाशिक्षण के संदर्भ में परीक्षण अब एक परंपरागत विधि के रूप में नहीं माना जाता जो पहले एक निम्नस्तरीय पाठ्यक्रम या कक्षा से किसी दूसरे उच्चस्तरीय पाठ्यक्रम या कक्षा में प्रवेश पाने के लिए एक निश्चित विधि के रूप में प्रयुक्त होती थी। आधुनिक संदर्भ में परीक्षण को शिक्षण प्रक्रिया का एक अभिन्न अंग माना जाता है और शिक्षण के दौरान परीक्षण की प्रक्रिया का भी साथ-साथ चलना अपेक्षित माना जाता है। यह परीक्षण शिक्षार्थियों की सफलता और असफलता से संबद्ध नहीं है। यह परीक्षण शिक्षार्थी की उस क्षमता और सामर्थ्य से जुड़ता है जिसे लक्ष्य में रख कर शिक्षण प्रक्रिया चलती है। इस प्रकार परीक्षण पाठ के अध्यापन के समय शिक्षार्थी के भाषा संबंधी क्रियाव्यवहार को देखता है। यह क्रियाव्यवहार नियंत्रित एवं निर्देशित परिस्थिति में होता है जिससे शिक्षार्थी के क्रियाव्यवहार की सामर्थ्य-क्षमता का पता लगाया जा सकता है। इस संदर्भ में सामान्य परिस्थितियों में शिक्षार्थियों की ग्राह्य शक्ति को जाँचने के लिए चार प्रकार की परीक्षाएँ ली जा सकती हैं:

1. उपलब्धि परीक्षा: इस परीक्षा का प्रमुख उद्देश्य यह अनुमान लगाना होता है कि शिक्षण कार्यक्रम से शिक्षार्थी ने क्या सीखा, भाषा कौशलों को कहाँ तक सीख पाया और उनके आधार पर भाषा का प्रयोग किस हद तक उपयुक्त ढंग से कर पाया है आदि।

2. दक्षता परीक्षा: इसमें यह जाना जा सकता है कि शिक्षार्थी शिक्षण विषय को कहाँ तक समझ पाया है और भाषा-कौशलों में उसकी दक्षता या प्रवीणता का स्तर कितना है।

3. अभिरुचि परीक्षा: इससे यह पता चलता है कि शिक्षार्थी भाषा सीखने के लिए उपयुक्त अभिरुचि रखता है अथवा नहीं। यह भी अनुमान लगाया जा सकता है कि शिक्षार्थी अपेक्षित शिक्षण में सफल हो पाएगा या नहीं। इसके लिए यह आवश्यक नहीं कि शिक्षार्थी को लक्ष्य विषय का पूर्वज्ञान हो किंतु दक्षता परीक्षा के लिए लक्ष्य विषय का ज्ञान होना आवश्यक है।

4. निदानात्मक परीक्षा: उपर्युक्त तीनों परीक्षाएँ या तो शिक्षण कार्यक्रम से पहले या बाद में हो सकती हैं किंतु विश्लेषणात्मक परीक्षा शैक्षिक कार्यक्रम के दौरान बार-बार आवश्यकतानुसार की जाती है। इसमें यह देखा जाता है कि शिक्षार्थी को अभी कितना और क्या पढ़ाया जाना शेष है और किस समय पर किस शिक्षार्थी को लक्ष्य-विषय सीखने में कौन-कौन सी कठिनाई और समस्या होती है। शिक्षार्थी को ध्वनि, शब्द, वाक्य, अर्थ आदि स्तरों पर होने वाली जो समस्याएँ होती हैं उनका विवेचन और परीक्षण इसी आधार पर किया जाता है और उनका उचित समाधान भी ढूँढा जाता है।

परीक्षण और मूल्यांकन में अंतर है, किंतु सफलता और असफलता से जुड़े परीक्षण की संकल्पना से अलग करने के लिए 'मूल्यांकन' शब्द का प्रयोग उचित माना गया है। मूल्यांकन उद्देश्य-बाधित वह नियमित शैक्षिक प्रक्रिया है जो शिक्षार्थियों के सामर्थ्य एवं क्षमता का निरीक्षण करते हुए यह प्रयास करती है कि शिक्षण कार्य अधिक प्रभावी हो

सके। यह मूल्यांकन कक्षा में शिक्षार्थी का व्यवहार, शिक्षण समय में पूछे जाने वाले प्रश्नों के उत्तर, गृहकार्य आदि पर निर्भर होता है। इस मूल्यांकन में केवल शिक्षार्थी की ग्रहण-शक्ति ही नहीं अपितु उसका वैयक्तिक व्यवहार भी काफी हद तक कारण हो सकता है।

इस मूल्यांकन को मुख्यत: दो प्रकार का माना गया है :

1. निरवधिक मूल्यांकन: जैसा कि नाम से स्पष्ट है कि यह शिक्षण के प्रारंभ से अंत तक सतत चलने वाली प्रक्रिया है। यह प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से संपन्न हो सकता है। इसके लिए कक्षा में समय-समय पर चलाई जाने वाली परीक्षाएँ मुख्य आधार का काम कर सकती हैं। ये प्रत्यक्ष आधार की भूमिका निभाती हैं। इसके अतिरिक्त कक्षा में पढ़ाते समय प्रयुक्त होने वाले मौखिक और लिखित अभ्यास कराते हुए शिक्षार्थी द्वारा जो उत्तर दिए जाते हैं वे परोक्ष आधार बनते हैं।

2. अंतिम मूल्यांकन: समूची शिक्षण प्रक्रिया की समाप्ति के बाद क्रमबद्ध रूप से चलाई जाने वाली परीक्षाओं के प्रश्नपत्र और मौखिक परीक्षा के द्वारा अलग-अलग समय और संदर्भों मे शिक्षार्थी जो उत्तर देता है और उनमें जो भाषा-प्रयोग होते हैं, वे अंतिम मूल्यांकन के मूल आधार बनते हैं। इसी मूल्यांकन के आधार पर निर्णय लिए जाते है कि कौन-कौन से शिक्षार्थी उत्तीर्ण हुए और उन्हें किस-किस श्रेणी में रखा जाए।

मूल्यांकन की प्रक्रिया मात्र शिक्षार्थियों तक सीमित नहीं है बल्कि शिक्षण-सामग्री, शिक्षण विधि, शिक्षक के अध्यापन-कौशल, माध्यम आदि का भी मूल्यांकन हो सकता है। कुछ विद्वानों के मतानुसार शिक्षण-क्षेत्र में मूल्यांकन प्रक्रिया शिक्षार्थी की सफलता तक सीमित होती है, किंतु यह ध्यान में रखने की बात है कि शिक्षार्थी की असली सफलता शिक्षण प्रणाली, शिक्षणविधि, शिक्षण-सामग्री, शिक्षणमाध्यम, शिक्षक के अनुभव और कौशल तथा शिक्षार्थी की ग्राह्य शक्ति पर भी आधारित है।

8. निष्कर्ष

भाषाशिक्षण, विशेषकर अन्य भाषाशिक्षण का स्रोत 17वीं या 18वीं शताब्दी से माना जा सकता है, किंतु बीसवीं शताब्दी के चौथे दशक से इसमें काफी परिवर्तन आया है। इसमें न केवल भाषाअर्जन और भाषा अधिगम को लेकर विवेचन हुआ बल्कि भाषाशिक्षण की अनेक नई विधियों का भी विकास हुआ। इनमें प्रत्यक्ष विधि, व्याकरण, व्याकरण-अनुवाद विधि, सम्मिश्रण विधि और संप्रेषणपरक विधि अधिक प्रचलित हैं। पहले भाषाशिक्षण का केंद्रक शिक्षक या पाठ्य-सामग्री होती थी, आज इसका केंद्रक शिक्षार्थी हो गया है। इसी कारण व्यतिरेकी विश्लेषण में दो भाषाओं में अंतर के स्थलों का आकलन होता है और उन्हीं के आधार पर संभावित त्रुटियों का पूर्वानुमान लगाया जाता है। इन त्रुटियों को दूर करने के लिए उपचारात्मक सामग्री तैयार की जाती है। त्रुटि विश्लेषण भाषा अधिगम प्रक्रिया के अंतर्गत अन्यभाषा शिक्षण में आने वाली त्रुटियों का कारण ढूँढता है और भाषा के नियमों को आत्मसात करने में सहायक होता है। भाषा का परीक्षण विभिन्न भाषा कौशलों की क्षमता का परीक्षण है और मूल्यांकन से भाषाशिक्षण की प्रक्रिया में शिक्षार्थी के भाषा व्यवहार का निरीक्षण होता है और उसके आधार पर उसके सामर्थ्य तथा क्षमता का पता लगाया जाता है। आज प्रौद्योगिकी के विकास से भाषाशिक्षण में भी क्रांति आ गई है। मनुष्य और मशीन की अंत:क्रियात्मक प्रकृति से कंप्यूटर साधित भाषाशिक्षण काफी प्रभावी बन पड़ा है। दृश्य-श्रव्य सामग्री से शिक्षण को रोचक शैली में बोधगम्य बनाया जा सकता है। वस्तुत: आज भाषाशिक्षण का क्षेत्र बहुत व्यापक हो गया है, इस लिए भाषा के विभिन्न आयामों को ध्यान में रखते हुए शिक्षण कार्यक्रम आयोजित करना उपादेय होगा।